

दार्शनिक प्रतिक्रमण

(हिन्दी अर्थ सहित)

एवं

नई छहढाला

रचयिता :

मुनि श्री प्रणम्य सागर जी

प्रकाशक :

श्री अजितप्रसाद जैन, जगदीश जैन
दिल्ली

कृति : दार्शनिक प्रतिक्रमण
कृतिकार : मुनि श्री 108 प्रणम्यसागर जी महाराज
आशीर्वाद : आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी महाराज
संस्करण : षष्ठम्, दिसम्बर 2020
प्रतियाँ : 1000

प्राप्ति स्थान

आर्हत विद्या प्रकाशन,
गोटेगाँव, जिला नरसिंहपुर (म०प्र०)
९४२५८-३७४७६

आचार्य अकलंक देव जैन विद्या शोधालय समिति,
१०९, शिवाजी पार्क, देवास रोड, उज्जैन (४७६०१०)
९४२५०-९२४८३

पुण्यार्जक

राजेन्द्र कुमार जैन, श्रीमति अन्जू जैन, निमित्त जैन, पूजा जैन,
अर्पित जैन, अनन्या जैन
आर०के०मार्बल एण्ड टाइल्स हाउस,
१६ ए, प्रेमपुरी, मुजफ्फरनगर

मुद्रक

श्री बालाजी पब्लिकेशन्स
6, गुलशन विहार, मुजफ्फरनगर (उ०प्र०)
दूरभाष : 0131-2660440

स्वाभिव्यक्ति

श्रावक के षट् आवश्यक देवपूजा, गुरु-उपास्ति, स्वाध्याय, संयम, तप और दान है, इस तथ्य से सभी अवगत हैं। परन्तु कुछ मनीषियों का ऐसा भी सोचना है कि श्रावक के षट् आवश्यक भी वही हैं, जो मुनियों के स्तुति, वन्दना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान, कायोत्सर्ग और सामायिक आवश्यक हैं। जो भी हो इतना सुनिश्चित है कि श्रावक अपने दोषों की आलोचना के लिए प्रतिक्रमण करता है। आलोचना पाठ आदि की रचना विद्वानों ने इसी ध्येय से की है। देवपूजा आदि जो षट् आवश्यक हैं, उनमें भी प्रकारान्तर से प्रतिक्रमण गर्भित है क्योंकि प्रतिक्रमण तप का ही एक भेद है। तप दो प्रकार के हैं, बाह्य और अभ्यन्तर। उनमें अनशन आदि छह बाह्य तप हैं और प्रायश्चित आदि छह अंतरंग तप हैं। इसी प्रायश्चित के आलोचना, प्रतिक्रमण आदि नव भेद होते हैं। अतः प्रतिक्रमण अभ्यन्तर तप है, यह सिद्ध होता है। 'कृतदोषनिराकरणं प्रतिक्रमणम्' अर्थात् किये हुए दोषों को दूर करना प्रतिक्रमण है। यह प्रतिक्रमण ही अपने आप में आने का एक माध्यम है।

श्रावक श्रद्धावान्, विवेकवान और क्रियावान होता है, इस परिभाषा से सभी लोग परिचित हैं। वह श्रावक व्रत सहित भी होता है और व्रत रहित भी। व्रतों से तात्पर्य यहाँ बारह व्रतों के ग्रहण से है। आज के इस भोग-बहुल युग में श्रावक व्रतों के ग्रहण करने में असमर्थ सा होता जा रहा है, पर अभाव नहीं है। इन व्रती श्रावकों के लिये श्रावक प्रतिक्रमण उपलब्ध हैं।

श्री सम्मेद शिखर जी में प्रवास चल रहा था। इसी दौरान कुछ ऐसे भाई लोग आये जो घर में रहकर ही ब्रह्मचर्य व्रत की साधना करते हैं और भविष्य में मोक्षमार्ग पर बढ़ने के लिए कटिबद्ध हैं। इस बीच की परिस्थिति में वे भाई न तो श्रमण-प्रतिक्रमण कर पाते हैं और न श्रावकों का व्रत-प्रतिक्रमण। कारण स्पष्ट है कि उनके पास न तो महाव्रतों का संकल्प है और न अणुव्रतों का। फिर भी आचरण व्रती जैसा संयमित रहता है। ऐसे ही कुछ भाइयों ने, जिनमें भाई मनोज, सुनील, विक्रम जबलपुर से श्री सम्मेद शिखर जी यात्रा के लिए आये थे तो उन्होंने अपनी यह मनोव्यथा व्यक्त की। उनकी भावना को पहले तो मात्र हमने सुन लिया पर बाद में उनकी भावना ने मेरे मन में भी एक भाव उत्पन्न कर दिया कि हम उनकी भावना को साकार करें। सामान्य श्रावकों के लिये अपने गृहस्थ सम्बन्धी दोषों के निवारणार्थ मात्र आलोचना पाठ है या कहीं कुछ भावनात्मक गद्य पाठ भी उपलब्ध हो जाता है। अतः सभी गृहस्थों के लिये जो भले ही अव्रती हों, एक ऐसा प्रतिक्रमण पाठ होना चाहिये, जिसके करने में उन्हें भी ऐसा महसूस हो कि मुनिराज की तरह हमने भी प्रतिक्रमण करके अपने दोषों का निवारण किया है। भावना बलवती होती है तो कार्य बहुत शीघ्र हो जाता है। एक ही रात में इसकी भूमिका बन गयी और समय मिलने पर लिपि बद्ध भी कर दिया। प्रयास यह किया है कि चाहे व्यापारी वर्ग का श्रावक हो, बुजुर्ग हो या कॉलेज-स्कूल के छात्र-छात्रायें, प्रत्येक के लिये यह प्रतिक्रमण उपयोगी है। सामूहिक अथवा व्यक्तिगत किसी भी तरह से इसका सुविधानुसार दिन-रात में पाठ

करके श्रावक लाभान्वित होवे, यही मंगल भावना इस कार्य की पृष्ठभूमि है। बहुत अल्प समय में यह कार्य पूर्ण हुआ है। इसका कारण पूज्य गुरुदेव आचार्य विद्यासागर जी महाराज का वात्सल्यमयी आशीष और सिद्धक्षेत्र की विशुद्ध वर्गणाओं का ग्रहण है। मुझ अल्प बुद्धि ने अपनी सामर्थ्य से जो प्रयास किया है वह आपके सामने है। यह मात्र एक दिशा है। यदि कोई और विस्तार से करना चाहे तो उसका स्वागत है। इसके साथ ही कृति को पूर्णतः उपयोगी बनाने के लिये हिन्दी का सामायिक पाठ भी संकलित किया है। साथ ही देव-गुरु-शास्त्र की आसादनायें और आचार्य भक्ति भी प्रस्तुत हैं।

जिस तरह जिन श्रावक अर्थात् जैनी भाई की पहचान के बाह्य चिह्न देवदर्शन, जल छानना और रात्रि भोजन त्याग है, उसी तरह उसकी आध्यात्मिक पहचान के लिये प्रतिक्रमण और सामायिक ये कार्य अवश्य होने चाहिये। जिसको संस्कृत/प्राकृत कुछ भी पढ़ने में असुविधा होती हो तो वह भी मात्र हिन्दी भाषा का प्रतिक्रमण और सामायिक पाठ पढ़कर अपनी आत्मनिष्ठा को बलवती बना सकता है। तीनों संध्याओं में यदि संभव न हो सके तो सुबह-शाम की दो संध्याओं में और वह भी संभव न हो तो कम से कम चौबीस घंटे में एक बार यह आध्यात्मिक चर्या प्रत्येक जैन कुल मात्र में जन्म लेने वाले की हो ऐसी मेरी आत्मिक भावना है। व्यक्ति की व्यस्तता को ध्यान में रखते हुए ही इसे यथासंभव संक्षिप्त बनाने का प्रयास किया है।

जिन दर्शन (कुल) में जन्म लेने वाले और विशेषतः श्रद्धा रखने वाले सभी दार्शनिक हैं। जिन्होंने दर्शन प्रतिमा मात्र को ग्रहण किया है, वे भी दार्शनिक हैं। इस सभी दार्शनिक श्रावकों के लिये यह प्रतिक्रमण पाठ है।

इन सभी के पाठ कर्मों का क्षय हो, इसी मंगल भावना के साथ।

ॐ नमः

दार्शनिक प्रतिक्रमण

(मुनि प्रणम्य सागर कृत)

अव्रती श्रावकों के लिए

श्रीमज्जिनपदाभ्यासं प्रतिपद्यागसां जये।

मनोवाक्काययोगेन करिष्यामि प्रतिक्रमम् ॥१॥

श्रीमान् जिनेन्द्र भगवान् के चरणों की समीपता को प्राप्त करके पापों पर विजय प्राप्त करने के लिए मन-वचन-काय के योग से प्रतिक्रमण करूंगा ॥

अहं पापी महादुष्टो महामूढो महालसः।

छली धूतो महालो भी सर्वदुर्गुणसम्भृतः ॥२॥

हे भगवन्! मैं पापी हूँ, मैं बहुत दुष्ट हूँ, मैं महामूर्ख हूँ, मैं महान आलसी हूँ, मैं कपटी हूँ, मैं धूर्त हूँ, मैं बड़ा लोभी हूँ, मैं सभी दुर्गुणों से भरा हुआ हूँ ॥

अहो कालुष्यचित्तेन दुष्टमुक्तञ्च चिन्तितम्।

कृतञ्चानर्थबाहुल्यं पापिना कामिना मया ॥३॥

हे भगवन्! अहो! मुझ पापी ने, मुझ कामी ने चित्त की कलुषता से बहुत बुरा कहा है, बुरा चिन्तन किया है और अनेक अनर्थ किये हैं।

गृहे विद्यालये चापि चापणे मित्रमेलने ।

कृतैः शुद्धये कुर्वे प्रतिक्रमणभावनाम् ॥४॥

घर में, विद्यालय (कॉलेज) में, दुकान में, मित्रों से मिलने से जो पाप किये हैं उनकी शुद्धि के लिए मैं प्रतिक्रमण की भावना करता हूँ।

खम्मामि सव्वजीवाणं सव्वे जीवा खामंतु मे।

मेत्ती मे सव्वभूदे सु वेरं मझं ण केण वि ॥५॥

मैं सभी जीवों को क्षमा करता हूँ, सभी जीव मुझे क्षमा करें। मेरा सभी जीवों में मैत्री-भाव है, मेरा किसी भी प्राणी से वैर भाव नहीं है।

एइंदिया - पुढविकाइया - आउकाइया - तेउकाइया - वाउकाइया -
वणप्फदिकाइया - वे इंदिया - ते इंदिया - चउरिंदिया - पंचेदिया -
सण्णि पंचेदिया-असण्णि पंचेदिया एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो

कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥

एकेन्द्रिय, पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक, दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय, पंच इन्द्रिय, संज्ञी पंचन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय इन जीवों को मारा हो, उन्हें संताप पहुँचाया हो, उनको विराधित किया हो, उनके अंग-उपांगों का घात किया हो अथवा कराया हो अथवा करने वाले की अनुमोदना की हो तो मेरा वह दुष्कृत्य मिथ्वा होवे ।

अट्ठमूलगुणेषु सत्तवसणविवज्जेसु पमादेण अण्णाणेण वा कयाइचार-
सोहणठें तिक्कसायेण कयाणाचार-दूरकरणटुं य छेदोवट्ठावणं होदु मझं ॥

आठ मूलगुणों में और सप्तव्यसन के त्याग में प्रमाद से, अज्ञान से जो मेरे द्वारा अतिचार (दोष) लगे उनकी शुद्धि के लिए तथा तीव्र कषाय के कारण अनाचार (महादोष) किया हो तो उसको दूर करने के लिए मैं उपस्थापना करता हूँ ।

अरिहंतसिद्ध आइरिय उवज्झायसव्वसाहुसक्खियं सम्मत
पुव्वगं मूलगुणं दिढव्वदं मे भवद् मे भवदु मे भवदु ॥

अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्व साधु इन पाँच परमेष्ठी की साक्षी से सम्यक्त्व पूर्वक मूल गुणों की दृढ़ता मुझे हो, मुझे हो, मुझे हो ।

अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाइचार- विसोहिणिमित्तं
पुव्वाइरियकमेण आलोयणसिद्धभत्ति- काउसगं करेमि ॥

अब दैवसिक (रात्रिक)प्रतिक्रमण में समस्त अतिचारों की विशुद्धि के लिये पूर्व आचार्यों के चले आये क्रमानुसार आलोचना पूर्वक सिद्ध भक्ति का मैं कायोत्सर्ग करता हूँ ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥६॥

लोक के समस्त अरहंत परमेष्ठी को मेरा नमस्कार हो, लोक के सभी सिद्धों को मेरा नमस्कार हो, लोक में विद्यमान समस्त आचार्यों को मेरा नमस्कार हो, लोक में विद्यमान सभी उपाध्यायों को मेरा नमस्कार हो, लोक में विद्यमान सभी साधु परमेष्ठियों को मेरा नमस्कार हो ।

चत्तारि मंगलं अरहंत मंगलं सिद्ध मंगलं

साहू मंगलं केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं।

चत्तारि लोगुत्तमा अरहंत लोगुत्तमा सिद्ध लोगुत्तमा

साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि अरहंत सरणं पव्वज्जामि

सिद्ध सरणं पव्वज्जामि साहूसरणं पव्वज्जामि

केवलिपण्णत्तं धम्म सरणं पव्वज्जामि।

इस संसार में चार मंगल हैं- अरहंत देव मंगल हैं, सिद्ध भगवान मंगल हैं, साधू गण अर्थात् आचार्य, उपाध्याय और साधू परमेष्ठी मंगल हैं, केवली भगवान के द्वारा कहा हुआ धर्म मंगल है। लोक में चार ही उत्तम हैं। अरहन्त देव, सिद्ध प्रभु, साधु गण और केवली भगवान के द्वारा कहा हुआ धर्म। लोक में चार ही शरण भूत हैं उनकी शरण को मैं प्राप्त होता हूँ। मैं अरहंतों की शरण को प्राप्त होता हूँ, मैं सिद्धों की शरण को प्राप्त होता हूँ, मैं साधू गण की शरण को प्राप्त होता हूँ, मैं केवली भगवान के द्वारा कहे हुए धर्म की शरण को प्राप्त होता हूँ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो समुद्देसु पण्णारसकम्म-भूमिसु जाव-अरहंताणं, तित्थयराणं, अणुबद्धाणं, अंतयडाणं, मूकाणं, समुग्घादाणं, उवसग्गाणं इदि सत्तविहकेवलियाणं णाणाणं दंसणाणं चरित्ताणं सदा किरियकम्मं करेमि। मणसा, वचसा, काएण, सव्वसावज्जजोगं पच्चक्खामि।

भंते ! अइचारं अणाचारं पडिक्कमामि, जिंदामि, गरहामि अप्पाणं जाव कालं पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि॥

नववारं णमोकारमन्तम् (नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

जम्बुद्वीप, धातकी खंड और अर्ध पुष्कर द्वीप इन ढाई द्वीपों में तथा लवण और कालोदधि इन दो समुद्रों में, पाँच भरत, पाँच ऐरावत व पाँच विदेह इन १५ कर्मभूमियों में होने वाले जितने भी अरहंत केवली, तीर्थंकर केवली, अनुबद्ध केवली, अंतकृत केवली, मूक केवली, समुदघात गत केवली और उपसर्ग केवली इस प्रकार सात प्रकार के केवली भगवान व ज्ञान, दर्शन, चारित्र सम्बन्धी कृतिकर्म मैं सदा करता हूँ। मैं मन से, वचन से, काय से सभी सावध (हिंसा) योगों को त्याग करता हूँ। हे भगवन्! मेरे मूल गुणों में लगे अतिचारों का व अनाचारों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। आत्म साक्षी पूर्वक निन्दा करता हूँ। गुरू साक्षी

पूर्वक गह्रा करता हूँ। जितने काल मैं उपासना करता हूँ उतने काल पर्यन्त पाप कर्मों व दुश्चेष्टाओं का त्याग करता हूँ।

(इस प्रकार दण्डक पढ़कर 9 वार णमोकार मंत्र पढ़ें)
आदीसं वंदे जिणमजियं संभवमभिणंदणसुमइं ।
पउमसुपासं चंदं सुविहिं सीयलसेयवासुपुज्जं ॥७॥
विमलमणंतं धम्मपवत्तय - धम्म संतिं तिपयहरं ।
कुंथमरं सिवकंतारमणं मल्लिं कम्मियच्चुण्णकरं ॥८॥
मुणिसुव्वयणमिणाहजिणेसं जदुकुलतिलयं णे मिजिणं ।
पासपहुं भयवं वरवीरं वंदे सव्वं तित्थयरं ॥९॥
माणुस खेत्ते विहरणभूदा सीमंदरजिणभयवंता ।
दिंतु समाहिं बोहिसुलाहं रविससिसहसपयासंता ॥१०॥

मैं प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ जिन की वन्दना करता हूँ। मैं अजितनाथ भगवन् की, संभवनाथ भगवान की, अभिनंदन भगवान की, सुमति नाथ भगवान की, पद्मप्रभ भगवान की, सुपार्श्वनाथ भगवान की, चंद्रप्रभ भगवान की, सुविधिनाथ भगवान की, शीतलनाथ भगवान की, श्रेयांस नाथ भगवान की, वासुपूज्य भगवान की, विमलनाथ भगवान की, अनंतनाथ भगवान की, धर्मप्रवर्तक धर्मनाथ जिनेन्द्र की, तीर्थंकर, चक्रवर्ती और कामदेव इन तीन पदों के धारी शांतिनाथ भगवान की, मोक्ष वधू में रमण करने वाले कुंथुनाथ भगवान की और अरनाथ भगवान की, कर्मों को चूर्ण करने वाले मल्लिनाथ भगवान की, मुनिसुव्रत नाथ भगवान की, नमिनाथ जिनेश की, यादव कुल के तिलक नेमिनाथ जिनेन्द्र की, पार्श्वप्रभु की और श्रेष्ठ वीर भगवान की मैं वंदना करता हूँ। ये सभी तीर्थंकर हैं। मनुष्य क्षेत्र अर्थात् ढाई द्वीप में विहार करने वाले श्रीमंदर आदि जिन-भगवंत हैं जो कि हजारों सूर्य और चन्द्रमाओं से अधिक प्रकाशमान हैं। ये सभी भगवान मुझे समाधि देवें और बोधि (अर्थात् रत्नत्रय) का श्रेष्ठ लाभ देवें। ॥७-८-९-१०॥

श्रीमते वर्धमानाय नमो नमित-विद्-विषे।

यज्ज्ञानान्तर्गतं भूत्वा त्रेलोक्यं गोष्पदायते ॥११॥

जिनके ज्ञान में तीन लोक के समस्त पदार्थ गोखुर के समान झलकते हैं, जिनके चरणों में शत्रु भी झुक जाते हैं ऐसे बाह्य और अन्तरंग लक्ष्मी से

सहित वर्धमान जिन के लिए नमस्कार हो ॥११॥

तवसिद्ध णयसिद्धे संजमसिद्ध चरित्तसिद्धे य।

णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि ॥१२॥

तप सिद्ध, नय सिद्ध, संयम सिद्ध, चरित्र सिद्ध, ज्ञान और दर्शन से सिद्ध पद को प्राप्त हुए सभी सिद्धों को मैं शिर झुकाकर नमस्कार करता हूँ ॥१२॥

(आलोचना)

इच्छामि भंते ! सिद्धभक्ति-काउसगो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तजुत्ताणं, अट्ठविह-कम्म- विप्प-मुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं, उड्डलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं तव सिद्धाणं णय सिद्धाणं संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं, अतीताणागद- वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ॥

हे भगवन्! मैंने सिद्ध भक्ति का कायोत्सर्ग किया, उसकी आलोचना करता हूँ। सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यक् चारित्र से युक्त, आठ प्रकार के कर्मों से रहित, आठ गुणों से सम्पन्न, ऊर्ध्व लोक के मस्तक पर विराजमान, तप सिद्ध, नय सिद्ध, संयम सिद्ध, चारित्र सिद्ध, भूत-भविष्यत-वर्तमान काल त्रय सिद्ध, सभी सिद्धों की मैं सदा अर्चना, पूजा, वंदना और नमस्कार करता हूँ। मेरे दुःखों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, बोधि की प्राप्ति हो, सुगति में गमन हो और जिनेन्द्र भगवान के गुणों की सम्पत्ति मुझे प्राप्त हो।

इच्छामि भंते ! देवसियं (राइयं) आलोचेउं तत्थ-

हे भगवन्! मैं देवसिक (रात्रिक) दोषों की आलोचना करने की इच्छा करता हूँ। उसमें

पंच य अणुव्वयाइं जलगालणं रायभत्तविरदी य।

जिणदंसणं विजाण पक्खियभव्वस्स अट्ठगुणं ॥१३॥

पाँच अणुव्रत, जल छानना, रात्रि भोजन त्याग और जिन दर्शन ये पाक्षिक श्रावक के आठ मूल गुण जानो ॥१३॥

महुमंसमज्जजूआ-परइत्थी वेस्सारमणगमणंपि।

आखेडं सत्तवसणं जावज्जीवं विवज्जेमि ॥१४॥

मधु, मांस, मदिरा, जुआ, परस्त्रीगमन, वेश्यागमन, और शिकार ये सात व्यसन जीवन पर्यन्त के लिए छोड़ देता हूँ ॥१४॥

(प्रतिक्रमण पीठिका)

अथसर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं दैवसिक (रात्रिक) प्रतिक्रमण- क्रियायां कृतदोष- निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्म- क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव- समेतं श्रीप्रतिक्रमण-भक्ति- कायोत्सर्गं करोम्यहम् ॥

अब सभी दोषों की विशुद्धि के लिए दैवसिक (रात्रिक) प्रतिक्रमण की क्रिया में किये हुए दोषों को दूर करने के लिए पूर्व आचार्यों के क्रम से समस्त कर्मों के क्षय के लिए भावपूजा, वन्दना, स्तुति सहित मैं प्रतिक्रमण भक्ति का कायोत्सर्ग करता हूँ।

(अत्र नववारं णमोकारमन्त्रं पठेत्)

(यहाँ पर नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।

णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

णमो जिणाणं ! णमो जिणाणं! णमो जिणाणं! परमेस! वीदराय! जिण!
देवाहिदेव! सव्वण्हू! णीराय! णिद्धोस! तित्थयर! पंचकल्लाणपुज्जापत्त!
गुणरयण! सीलसायर! वड्डमाण! णमोत्थु दे णमोत्थु दे णमोत्थु दे!

जिनेन्द्र देव को नमस्कार हो, नमस्कार हो, नमस्कार हो! हे परम ईश्वर!
हे वीतराग! हे जिन! हे देवाधिदेव! हे सर्वज्ञ! हे नीराग! हे निर्दोष! हे तीर्थकर! हे पंच कल्याण की पूजा को प्राप्त! हे गुण रत्न! हे शील सागर!
हे वर्धमान! आपको नमस्कार हो, नमस्कार हो, नमस्कार हो ॥

मम मंगलं-अरहंता य, सिद्धा य, आइरिया य, उवज्झाया य, साहवो य,
उसहादिगणहरा य, गोयमसुहम्मज्जम्बूतिणिण- अणुबद्ध-केवलिणो य, विण्णु-
णंदि-अवराजिय-गोवद्धण- भद्दबाहु-पंच सुदकेवलिणो य, अंगपुव्वहरा य,
परंपरा आइरिया य, जिणिंदतित्थं, जिणिंद पव्वयणं सव्वइड्डिसंपण्णमहरिसी
य।

अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधुगण, वृषभ आदि गणधर
परमेष्ठी, गौतम, सुधर्म, जम्बू स्वामी ये तीनों अनुबद्ध केवली, विण्णु,

नंदि, अपराजित, गोवर्धन, भद्रबाहु ये पाँच श्रुत केवली, अंग पूर्वो के धारक, परम्परा आचार्य, जिनेन्द्र भगवान का तीर्थ, जिनेन्द्र भगवान का प्रवचन, सभी ऋद्धियों से सम्पन्न महर्षि ये सब मेरे लिये मंगल दायक हों।

उड्ड-मह-तिरिय-लोए सिद्धायदणाणि णमस्सामि, अट्टावयपव्वये सम्मेदे, उज्जंते, चंपाए, पावाए, सिद्धवरकूडे, बडवाणीए, ऊणे, मुत्तागिरीए कुंडलपुरे, तारंगाए, मदुराए, सत्तुंजए, कुंथगिरिसिहरे, दोणगिरिसिहरे, कोडिसिलाए सिद्धाणि सीहियाओ इसिपम्भारतलगदाणं सिद्धाणं सिद्धभूमीओ किट्टिमा-किट्टिमाणि जिणायदणाणि चेइयरुक्खचेइयाणि मम पवित्त-मंगलभूदाणि एदाणि अहिवंदिऊण अंजलि मत्थयम्मि काऊण तिविहं णमस्सामि।

ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोक के सिद्धायतनों को नमस्कार हो। अष्टापद पर्वत, सम्मेद-शिखर, ऊर्जयन्त पर्वत, चंपापुरी, पावापुरी, सिद्धवरकूट, बड़वानी, ऊन, मुक्तागिरि, स्वर्णगिरि, कुंडलपुर, तारंगा, मथुरा, शत्रुजय, कुंथगिरि शिखर, द्रोणगिरि पर्वत, कोटि शिला इत्यादि स्थानों में जो कोई सिद्धों की निषिद्धिका स्थान हैं, ईषत् प्राग्भार मोक्षशिला पर स्थित सिद्धों की जो सिद्धभूमि हैं, कृत्रिम-अकृत्रिम जिनायतन हैं, चैत्यवृक्ष और चैत्य हैं ये सब मेरे लिये पवित्र और मंगल स्वरूप हैं। इनको मैं नमस्कार करके मस्तक पर अंजुली रखकर मन वचन काय की शुद्धि से नमस्कार करता हूँ।

पडिक्कमामि भंते! पढमे मूलगुणे धूलयडे हिंसाविरदिवदे- गिहसोहणे, मुत्तवच्चो गिहसोहणे, विपणि-सोहणे, वाहणेण गमणे, हिंसवत्थुभेषज-वावारणिमित्ते, तिक्खखारेण वत्थपक्खालणे, कुप्पभंड धोवणे, ण्हाणे वत्थुपक्खेवे, कवाडस्स उग्घाडे पिधाणे य, भुविभारघस्सणे, इं णपज्जालणे, विरोही हिंसाए, आरंभी हिंसाए, उद्दोगी हिंसाए, गम्भघादे, अप्पघाद-परिणामे, परघाद-परिणामे णाणेण अण्णाणेण वा जं मए देवसिए (रत्ती) मणसा वचसा काएण कदकारिदाणुमोणेण पावकम्मं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! मैं प्रथम स्थूलअहिंसा मूल गुण व्रत में लगे दोषों का प्रतिक्रमण करता हूँ। घर की साफ-सफाई में, मूत्रालय और शौचालय की सफाई में, दुकान की सफाई में, वाहन से गमन करने में, हिंसक

वस्तु और दवा के व्यापार के निमित्तों में, तीक्ष्ण क्षार अर्थात् सोड़ा, डिटर्जेंट आदि से वस्त्र धोने में, धातु, पात्र आदि धोने में, स्नान करने में, वस्तु को फेंकने में, दरवाजों को खोलने बन्द करने में, पृथ्वी पर भारी वस्तु घसीटने में, ईंधन जलाने में, विरोधी हिंसा में, आरंभी हिंसा में, उद्योगी हिंसा में, गर्भस्थ का घात होने में, आत्महत्या के परिणाम में, पर-घात के परिणाम में ज्ञान से, अज्ञान से दिवस में (रात्रि में) मेरे द्वारा मन वचन काय से कृत, कारित, अनुमोदन से जो पाप कर्म किया गया, वह दुष्कृत्य मेरा मिथ्या हो।

पडिक्कमामि भंते ! विदिए थूलयडे असच्चविरदिमूलगुणे- मिच्छोवदेसे अणादरवयणे, वंचणावयणे, रहो अब्भक्खाणे, णिंदावयणे, पेसुण्णवयणे, अणत्थभासणे, वेरकरणवयणे, भेदकरणवयणे, विकहाए, अप्पपसंसण-दाए, पर-परिवादणाए जं मए दवेसिए (रत्तीए) पावकम्मं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! स्थूल असत्य विरति नामक दूसरे मूलगुण में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। मिथ्या उपदेश देने में, अनादर के वचन बोलने में, दूसरों को ठगने वाले वचनों में, एकान्त का रहस्य प्रकट करने में, निंदा करने में, चुगली करने में, अनर्थ बोलने में, वैर बढ़ाने वाले वचनों में, फूट डालने वाले वचन बोलने में, विकथा करने में, आत्म प्रशंसा करने में, दूसरों को परिताप पहुँचाने वाले वचनों में मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप-कर्म अर्जित किया गया, वह दुष्कृत्य मेरा मिथ्या होवे।

पडिक्कमामि भंते ! तिदिए थूलयडे थेण विरदिमूलगुणे- पडिदग्गहणे, थे णहरि यादाणे, विज्जु अ-थेडे, भूजल थेडे, करादाणे, राजणियमोल्लंघणे, सदरिसवत्थुमिस्सणे, हीणाधियमाणोम्माणे जं मए देवसिए (रत्तीए) पावकम्मं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! स्थूल अचौर्य अणुव्रत नामक तीसरे मूलगुण में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ-किसी की पड़ी हुई वस्तु को ग्रहण करने में चोरी करके लायी गयी वस्तु के ग्रहण में, बिजली की चोरी में, जमीन और जल की चोरी में, टैक्स नहीं देने में, राजकीय (शासकीय) नियमों का उल्लंघन करने में, सदृश वस्तु को मिलाकर देने में, ज्यादा खरीदने और

कम करके बेचने में मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप कर्म किया गया है, वह मेरा दुष्कृत्य मिथ्या होवे।

पडिक्कमामि भंते ! चउत्थे थूलयडे अबंभविरदिमूलगुण कामवद्धणरस-सेवणे, कामवद्धणतेलमद्धणे, कामवद्धण- गीदसवणे, मवद्धणगंधाणुलेवणे, कामवद्धणचित्तरूवाणु- पेक्खणे जं मए देवसिए (रत्तीए) पावकमं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! अब्रह्म से विरति नामक चौथे स्थूल मूलगुण में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। काम वर्धक रसों के सेवन में, काम वर्द्धक तेल मर्दन में, काम वर्धक गीत सुनने में, काम वर्धक सुगन्धित इत्र आदि लगाने में, काम वर्धक चित्रों और रूप को देखने में मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप कर्म किया गया, वह दुष्कृत्य मिथ्या हो ॥४॥

पडिक्कमामि भंते ! पंचमे थूलयडे परिग्गहविरदिमूलगुणे-असीम परिग्गहस्स असीमाए, सीमा-अइक्कमणाए, अइवाहण- लालसाए, अहिय-वत्थु-वात्थु-वत्थ-संगहणे, परपरिग्गह-विम्मये, अंतो अंतो अइ-लोलुवदाए, णिक्खिविदस्स अपरिमज्जणे, दुप्पओगे य जं मए देवसिए (रत्तीए) पावकमं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! अपरिग्रह नामक पाँचवे स्थूल मूलगुण में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। अपार परिग्रह की सीमा न बनाने में, जो सीमा बनायी उसका अतिक्रमण करने में, अति वाहन संग्रह की लालसा में, अत्यधिक वस्तुएं, मकान-जायदाद आदि, वस्त्र के संग्रह में, दूसरे के परिग्रह को देखकर विस्मय करने में, भीतर ही भीतर मन में परिग्रह के प्रति अति लोलुपता में, जो परिग्रह कहीं रखा है उसका परिमार्जन (देख-भाल) न करने में, जो परिग्रह है उसका दुरुपयोग करने में मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप कर्म किया गया, वह दुष्कर्म मेरा मिथ्या होवे ॥५॥

पडिक्कमामि भंते ! जलगालणमूलगुणे- खीणपुराणवस्थेण जलगालणे, जीवाणं अण्णत्थक्खेवणे, उवरिमेण जलपादणे, बहुजलोच्छालणे, सीदपेयपाणे, अणच्छाणजलपाणे जं मए देवसिए (रत्तीए) पावकमं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! जलगालन मूलगुण में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। फटे-पुराने वस्त्र से जल छानने में, जीवानी को अन्यत्र डालने में, ऊपर से जल गिराने में, बहुत जल को उछालने में, शीतल जल (पेप्सी आदि कोल्ड ड्रिंक) पीने में, अनछने जल को पीने में मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप कर्म किया गया, वह दुष्कृत्य मेरा मिथ्या होवे ॥६॥

पडिक्कमामि भंते। रायभत्तविरदि-मूलगुणे-अत्थंगदे दिवसे भुंजिदे, अणुदये दिणयरे भुंजिदे, रत्तिणिम्मिदस्स दिवा-भोयणे, सुमणिंदियाए भोयणे भोगकरणे वा, सयं रतीए भुत्ते अण्णं रत्तिं भुंजाविदे, जं मए देवसिए (रतीए) पावकम्म कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! रात्रि भोजन त्याग मूल गुण में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। दिन अस्त होने पर भोजन करने में, दिन उदय होने से पहले भोजन करने में, रात्रि में बनाया भोजन दिन में करने में, स्वप्न में भोजन करने में अथवा भोग करने में, स्वयं रात्रि में भोजन करने में, अन्य किसी को रात्रि में भोजन कराने में मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप कर्म किया गया, वह दुष्कृत्य मेरा मिथ्या होवे ॥७॥

पडिक्कमामि भंते! जिणदंसणमूलगुणे-मंदिरे कलहकरणे, मंदिरस्स आसादणे, चेइय-अवमाणे, दत्तदव्वग्गहणे, रायदोसजुद- देवदा आराहणे, जिणदेसणावसरे परोप्परं आलावे, पुत्तगेहवावार - विवाहा-इलोहण आराहेणे, णिग्गंथ- लिंगाणादरे जं मए देवसिए (रतीए) पावकम्म कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! जिन दर्शन मूल गुण में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। मंदिर में कलह करने में, मंदिर की आसादना में, चैत्यबिम्ब की अवमानना में, दान दिये द्रव्य का ग्रहण करने में, राग, द्वेष से युक्त देवताओं की आराधना में, जिन देशना के समय आपस में बातचीत करने में, पुत्र, घर, व्यापार, विवाह आदि के लोभ से आराधना करने में, निर्ग्रन्थ लिंग का अनादर करने में मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप कर्म किया गया, वह मेरा दुष्कृत्य मिथ्या होवे ॥८॥

पडिक्कमामि भंते! महुवसणपरिच्चागे - महुमयभेसजसेवणे, महुछत्तविराहणे, अइगिद्धीए भुंजणे, अइमत्तभोजणे, जीवसंसिदभोयणे जं

मए देवसिए (रत्तीए) पावकम्मं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! मधु व्यसन के परित्याग में जो दोष लगा हो मैं उसका प्रतिक्रमण करता हूँ। शहद वाली औषधि के सेवन में, मधुमक्खी के छत्ते की विराधना में, अति गृद्धता से भोजन करने में, अति मात्रा में भोजन करने में, जीवों से मिले हुए भोजन करने में जो मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में पाप कर्म किया गया, वह मेरा दुष्कर्म मिथ्या होवे ॥९॥

पडिक्कमामि भंते ! मंसवसणपरिच्चागे-पंचुंबर सेवणे, अभक्खसेवणे, अजाणफलभुंजणे, पणकीदमिट्ठाणखादणे, अमज्जिदाण्ण-उपक्कार सेवणे, चार-राग-खाण्ड क - भुजणे, ची णदे सी य-विंजण-से वणे, बेरोटिका-सेविका-कुरकुरा- पहुडि-पणवत्थुसेवणे, बिदल-खादणे जं मए देवसिए (रत्तीए) पावकम्मं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! मांस व्यसन परित्याग में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। पाँच उदुम्बर फल (बड़, पीपल, पाकर, ऊमर, कठूमर) के सेवन में, अभक्ष्य भक्षण में, अज्ञात फल को खाने में, दुकान से खरीदी मिठाई खाने में, अमर्यादित अन्न और मसालों के सेवन में, अचार-मुरब्बा खाने में, चीन देश के व्यंजन (चाइनीज फूड, फास्ट फूड) खाने में, डबल रोटी, सेव, कुरकुरा आदि बाजार की पैकेट बन्द पदार्थों के खाने में, द्विदल खाने में, मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप कर्म किया गया, वह दुष्कर्म मेरा मिथ्या हो ॥१०॥

पडिक्कमामि भंते ! मज्जवसण-परिच्चागे-अमज्जिदजल- सेवणे, णिद्वाभेसज-सेवणे, चाय कहवापाणे, देसीय- विदेसीयमज्ज सेवणे, मज्जावावाराणु-मोदण करणे, महुआवावारे, धूमपाणे, गुटखाचव्वणे जं मए देवसिए (रत्तीए) पावकम्मं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! मदिरा व्यसन त्याग में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। अमर्यादित जल (बिसलरी) का सेवन करने में, नींद की गोली खाने में, चाय, कॉफी पीने में, देशी-विदेशी मदिरा सेवन में, मदिरा व्यापार अनुमोदन और स्वयं करने में, महुआ व्यापार में, धूम्रपान में, गुटखा (पान पराग आदि पाउच) चबाने में मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप कर्म किया गया, वह मेरा दुष्कृत्य मिथ्या होवे ॥११॥

पडिक्कमामि भंते ! जुआवसणपरिच्चागे-जुआकीडाए, सपथेण णज्जणे, सट्टावावारे, विभागीयवावारे, उवदाग्गहणे, संगरेण कंदुगदंडपसुकीडा-वलोयणे जं मए देवसिए (रत्तीए) पावकम्मं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! जुआ व्यसन त्याग में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। जुआ खेलने में, शर्त लगाकर धन कमाने में, सट्टा (लॉटरी) व्यापार में, शेयर बाजार में, घूस (रिश्वत) ग्रहण करने में, शर्त लगा के क्रिकेट खेल और पशु-क्रीड़ा देखने में मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप कर्म किया गया, वह दुष्कर्म मेरा मिथ्या होवे ॥१२॥

पडिक्कमामि भंते ! परइत्थीरमणवसण-परिच्चागे-परइत्थीए (पुरुसेण) सम्बन्धेच्छाए, रूवचिंतणे, सहसंवासे, गमणा- गमणे, अणंगकीडाए, कुक्कुच्चायाए, परइत्थी-पलोहणे, काम- भोग-चिंताए जं मए देवसिए (रत्तीए) पावकम्म कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! परस्त्री रमण व्यसन के त्याग में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। परस्त्री (पुरुष) के साथ सम्बन्ध की इच्छा में, पर स्त्री (पुरुष) का रूप चिंतन में, पर स्त्री (पुरुष) के साथ रहने में, उसके साथ गमनागमन में, उससे अनंग क्रीड़ा में, कौत्कुच्य में, उसको प्रलोभन देने में, काम-भोग की चिंता में मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप कर्म किया गया, मेरा वह दुष्कृत्यस मिथ्या होवे ॥१३॥

पडिक्कमामि भंते ! वेस्सागमण वसण परिच्चागे- तददारपेक्खणे, तक्कहो-वण्णासस्स पढणे पाढणे सवणे य, चलचित्तपडे तक्कीडादसणे, सामिगाए अस्सागिगाए वा सह परिचयेच्छाए जं मए देवसिए (रत्तीए) पावकम्मं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! वेश्यागमन व्यसन के त्याग में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। वेश्या का घर देखने में, उसकी कथा-उपन्यास पढ़ने, पढ़ाने या सुनने में, सिनेमा गृह में उसकी चेष्टाएं देखने में, जिसका कोई स्वामी हो या न हो उसके साथ परिचय की इच्छा में मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप-कर्म किया गया, वह मेरा दुष्कर्म मिथ्या होवे ॥१४॥

पडिक्कमामि भंते! आखेडवसणपरिच्चागे-दण्डेण,, भालाए, वाणेण, गुलेलेण वा भूदघादिदे, घादं काऊण तच्चम्मेण गिहसोहाए, रोमजवत्थोवओगे,

कोसेयवत्ये, चम्मकटिबंध- हत्यसूदादिप्पओगे जं मए देवसिए (रत्तीए)
पावकम्मं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! शिकार व्यसन के त्याग में लगे दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। डंडे से, भाला से, बाण से, गुलेल से जीव घात करने में घात करके उसकी खाल से गृह शोभा बढ़ाने में, ऊन के वस्त्रों के उपयोग में, रेशमी वस्त्रों के उपयोग में, चमड़े की बेल्ट, पर्स आदि के उपयोग में दिवस (रात्रि) में मेरे द्वारा जो पाप कर्म किया गया, वह दुष्कर्म मेरा मिथ्या हो॥१५॥

इच्छामि भंते! इमं णिग्गंथं णिव्वाणमग्गं, सव्व दुक्खाणमंतकरं, समदायरं, तिलोगजेट्ठं दाणव-देवदा-णरपवर-महियं, तित्थयर-चक्कवट्टिबलदेवादि-महापुरिसाण-सेविदं, अणुत्तरं, णिस्सल्लं, अज्झप्पमूलं, वेरग्गभरं, अप्पसोक्खकरं एदम्हादो उवरि अण्णं णत्थि तं रोचेमि, तं सदहामि, तं वंछामि, एदेण मज्झ जीवयं अवि सफलं होदु।

हे भगवन्! मैं इस निर्ग्रन्थ रूप की इच्छा करता हूँ। यह रूप निर्वाण का मार्ग है, सभी दुःखों का अन्त करने वाला है, समता का निधान है, तीन लोक में ज्येष्ठ है, दानव, देवता और श्रेष्ठ मनुष्यों से पूजित है, तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव आदि महापुरुषों से सेवित है, अनुत्तर है, निःशल्य है, अध्यात्म का मूल कारण है, वैराग्य का भार लिये है, आत्मा को सुख देने वाला है, इससे बढ़कर अन्य कुछ भी नहीं है, मैं इसी की रुचि करता हूँ, इसी का श्रद्धान करता हूँ, इसी की वांछा करता हूँ। इस रूप के धारण से मेरा जीवन भी सफल होवे॥

पंच य अणुव्वयाइं, जलगालणं रायभत्तविरदी य।

जिणदंसणं विजाण, पक्खियभव्वस्स अट्ठगुणं ॥

पाँच अणुव्रत, जल गालण, रात्रि भुक्ति त्याग और जिन दर्शन पाक्षिक श्रावक के आठ मूल गुण जानो।

महुमंसमज्जजूआ, परइत्थीवेस्सारमणगमणं पि।

आखेडं सत्तवसणं जावज्जीवं विवज्जेमि॥

मधु, माँस, मदिरा, जुआ, परस्त्री रमण, वेश्या गमन और शिकार इन सात व्यसनों को जीवन पर्यन्त के लिये छोड़ता हूँ।

अथ सर्वदोष-विशुद्ध्यर्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण
सकलकर्म-क्षयार्थं वीरभक्तिं करोम्यहम्-

(अष्टादशवारं णमोकारमंत्रं पठेत्)

अब सभी दोषों की विशुद्धि के लिये पूर्वाचार्य के अनुक्रम से सकल कर्मों के क्षय के लिये मैं वीर भक्ति करता हूँ।

(यहाँ अठारह बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

वीर : प्रसिद्धो जगतीह कीर्त्या , वीरं मनन्तु स्वहिताय भव्याः।

वीरेण सूक्तं शिववर्त्म शुद्धं, वीराय तस्मै प्रणमोऽस्तु नित्यम्॥१॥

वीरात्प्रवृत्तं हितकारि तीर्थं, वीरस्य पादे समतैकसौ ख्यम् ।

वीरे हितं भव्यजनात्मनां वै, हे वीर! धन्योऽस्मि नुतौ प्रवृत्तः॥२॥

इस लोक में वीर भगवान अपनी कीर्ति से प्रसिद्ध हैं। अपने हित के लिये भव्य जीवो! वीर भगवान की पूजा करो। वीर भगवान ने जो मोक्ष का मार्ग बताया है वह शुद्ध है ऐसे वीर भगवान के लिए नित्य मेरा नमस्कार हो। वीर भगवान से ही सभी के लिए हितकारी तीर्थ की प्रवृत्ति हुई है। वीर भगवान के चरणों में ही समता का एक मात्र सुख है। भव्य जनों की आत्मा का हित वीर भगवान में ही है। हे वीर भगवन्! आपके नमस्कार में प्रवृत्त हुआ मैं धन्य हो गया हूँ।

भक्त्या तु ये वीरपदौ नमन्ति चित्तेऽपि पूतस्मृतिमावहन्ति ।

ते सर्वकार्ये सफला भवन्ति संसारसिन्धुञ्च समुत्तरन्ति ॥३॥

जो जीव भक्ति पूर्वक वीर भगवान के चरणों में नमन करते हैं, और अपने चित्त में भी उनकी पवित्र स्मृति को धारण करते हैं, वे सभी कार्यों में सफल होते हैं और संसार समुद्र को तैर जाते हैं॥

धम्मो मंगल मुदिट्ठं अहिंसा संयमो तवो ।

देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मो सया मणो ॥४॥

धर्म मंगल कहा गया है। वह धर्म अहिंसा, संयम और तप है। जिसका मन सदा धर्म में रहता है, देवता भी उसको नमस्कार करते हैं॥

इच्छामि भन्ते ! पडिक्कमादिचारमालोचेउं णिस्संकि यणिकं खिय-
णिव्विदिगिछं-अमूढदिट्ठी-उवगृहण- द्विदकरण-वच्छलत्त धम्मपहावणासु
अट्ठगुणेषु छसु अणायदणेषु तिसु मूढतासु अट्ठसु मदेसु सव्वदोसं

पडिक्कमामि। सम्मदंसण-सम्मणाण-सव्वाइयारं पडिविरदोमि आहार-सण्णाए, भए-सण्णाए, मेहुण-सण्णाए, परिग्गहसण्णाए, अट्टज्झाणे, रुद्धज्झाणे, मिच्छादसण-सल्लाए, माया-सल्लाए, णिदाण-सल्लाए, कोहकसाए, माण-कसाए, माया-कसाए, लोह-कसाए, किण्हलेस्स-परिणामे, णीललेस्स-परिणामे, काउलेस्स परिणामे, इत्थि कहाए, भत्तकहाए, राजकहाए, चोरकहाए, दुच्चिंतियाए, इत्थं दुप्परिणाम-पउत्तीए जं मए देवसिए (रत्तीए) पावकम्मं कदं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

हे भगवन्! मैं प्रतिक्रमण के अतिचारों की आलोचना करता हूँ। निःशक्ति, निःकांक्षित, निर्विचिकित्सा, अमूढदृष्टि, उपगूहन, स्थितिकरण, वात्सल्य और धर्म प्रभावना इन आठ गुणों में, छह अनायतनों में, तीन मूढ़ताओं में, आठ मदों के करने में लगे सभी दोषों का मैं प्रतिक्रमण करता हूँ। सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान के सभी अतिचारों से मैं दूर होता हूँ। आहार संज्ञा में, भय संज्ञा में, मैथुन संज्ञा में, परिग्रह संज्ञा में, आर्त्त ध्यान में, रौद्र ध्यान में, मिथ्यादर्शन शल्य में, माया शल्य में, निदान शल्य में, क्रोध कषाय में, मान कषाय में, माया कषाय में, लोभ कषाय में, कृष्ण-लेश्या के परिणाम में, नील लेश्या के परिणाम में, कापोत लेश्या के परिणाम में, स्त्री कथा में, भोजन कथा में, राज कथा में, दुश्चिंतन में इस प्रकार दुष्परिणाम की प्रवृत्ति से मेरे द्वारा दिवस (रात्रि) में जो पाप कर्म किया गया, वह दुष्कृत्य मेरा मिथ्या होवे।

अथ सर्वदोषविशुद्ध्यर्थं चतुर्विंशतितीर्थकर-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्

(नववारं णमोकारमंत्र पठेत्)

अब सभी दोषों की विशुद्धि के लिये मैं चतुर्विंशति तीर्थकर भक्ति करता हूँ। (यहाँ नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

वृषभं वृषभाराढ्य-मजितं जितबन्धनम् ।
सम्भवं भवहर्तारं नंदनं गुणनंदनम् ॥ १ ॥
सुमतिं मतिदातारं पद्मं पद्मप्रभालयं ।
सुपार्श्वं पार्श्वशोभाकं चन्द्रं चन्द्रप्रभाधिकम् ॥ २ ॥
पुष्पदन्तं तु दान्ताक्षं शीतलं सौख्यभूतलम् ।
श्रेयसं सौख्यकर्तारं वासुपूज्यं सुपूजितम् ॥ ३ ॥
विमलं निर्मलात्मान-मनन्तञ्चान्तकान्तकम् ।

धर्म धर्मध्वजे वायु शान्तिं शान्तिनिकेतनम् ॥४॥
 कुंथु कुन्धादिभर्तार-मरं मारमुरारिरम् ।
 मल्लिं कर्माष्टके मल्लं सुव्रतं मुनिसुव्रतम् ॥ ५ ॥
 नमिं नौमि मुनीशेष्ट-मरिष्टनेमि-मीष्टदम् ।
 पार्श्वनाथं प्रजानाथं वर्धमानं स्ववर्धनम् ॥६॥

धर्म के भार से भरे हुए वृषभनाथ भगवान हैं, जिन्होंने सभी बन्धनों को जीत लिया है वह अजितनाथ भगवान हैं, संसार का विनाश करने वाले सम्भव नाथ भगवान हैं, गुणों को बढ़ाने वाले अभिनंदननाथ हैं, बुद्धि को देने वाले सुमतिनाथ हैं, कमल की आभा के निलय पद्मप्रभु देव हैं, जिनके दोनों पार्श्व भाग शोभा के स्थान हैं वे सुपार्श्वनाथ हैं, चन्द्रमा की कान्ति से भी अधिक आभा वाले चन्द्रप्रभु भगवान हैं, इन्द्रियों का दमन करने वाले पुष्पदन्त भगवान हैं, समस्त पृथ्वी को सुखभूत शीतलनाथ हैं, सुख के कर्ता श्रेयांसनाथ हैं, सभी से पूजित वासुपूज्य भगवान हैं, समस्त कर्ममल से रहित निर्मल आत्मा वाले विमलनाथ हैं, मृत्यु का अन्त करने वाले अनन्तनाथ हैं, धर्म रूपी ध्वजा को फहराने के लिये वायु के समान धर्मनाथ हैं, शान्ति के आलय शान्तिनाथ हैं, कुन्धु आदि जीवों के पालनहारे कुन्धुनाथ भगवान हैं, काम रूपी राक्षस के लिये शत्रु को देने वाले अरनाथ हैं, अष्टकर्म के लिये मल्ल स्वरूप मल्लिनाथ हैं, श्रेष्ठ व्रतों के धारक मुनिसुव्रतनाथ हैं, मुनीश्वरों के इष्ट नमिनाथ हैं, इष्ट वस्तु को देने वाले नेमिनाथ हैं, प्रजा के नाथ पार्श्वनाथ हैं और अपने आत्मीय जनों को बढ़ाने वाले वर्धमान स्वामी हैं इन सभी को मैं नमस्कार करता हूँ।

इच्छामि भन्ते ! चउवीस तित्थयर भत्ति काउस्सगो कओ तस्सालोचेउं
 पंचमहाकल्लाणपत्ताणं, अट्ठमहा-पाडिहेर- सहियाणं, चउतीसातिसय-
 विसेसं संजुत्ताणंबत्तीसदेविंदमणिमउडमत्थयमहियाणं बलदेववासुदेव -
 चक्कहररिसिमुणिजइअणगारोवगूढाणं थुइसयसहस्स-णिलयाणं
 उसहाइवीरपच्छिममंगलमहापुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि
 णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइ-गमणं समाहिमरणं
 जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

हे भगवन्! मैंने चौबीस तीर्थकरों की भक्ति का कायोत्सर्ग किया,

उसकी आलोचना करता हूँ। पञ्च महा कल्याणकों को प्राप्त, अष्ट महा प्रातिहार्य से सुशोभित, चउतीस विशेष अतिशयों से युक्त बत्तीस देवेन्द्रों के मस्तक पर लगे मुकुटों की मणियों से पूजित, बलदेव, वासुदेव, चक्रवर्ती, ऋषि, मुनि, यति और अनगारों से घिरे हुए, लाखों स्तुतियों के आलय, ऋषभ आदि महावीर पर्यन्त मंगलमय महापुरुषों की हमेशा मैं अर्चना करता हूँ, पूजा करता हूँ, वंदना करता हूँ, नमस्कार करता हूँ, मेरे दुःखों का क्षय हो, मेरे कर्मों का क्षय हो, मुझे बोधि का लाभ हो, मेरा सुगति में गमन हो, मेरा समाधि मरण हो, जिनेन्द्र भगवान के गुणों की प्राप्ति मुझे प्राप्त हो॥

अथ सर्वपापकर्म विशुद्ध्यर्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं श्री सिद्धभक्ति-
श्री प्रतिक्रमण भक्ति - श्री वीरभक्ति -श्री चतुर्विंशति तीर्थकर भक्तीः कृत्वा
तद्धीनाधिकदोषविशुद्ध्यर्थं समाधिभक्ति- कायोत्सर्ग करोम्यहम्।

अब सभी पाप कर्मों की विशुद्धि के लिये पूर्वाचार्यों के अनुक्रम से सभी कर्मों के क्षय के लिये श्री सिद्धभक्ति, श्री प्रतिक्रमणभक्ति, श्री वीरभक्ति, श्री चतुर्विंशति तीर्थकर भक्ति करके उसमें लगे हीनअधिक दोषों के निवारण के लिए मैं समाधि भक्ति का कायोत्सर्ग करता हूँ।

(नववारं णमोकार मन्त्रम्)

अथेष्ट प्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः।
शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्यैः
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे
सम्पद्यतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः॥

(यहाँ नव बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

इष्ट प्रार्थना

प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग को मेरा नमस्कार हो। हे भगवन्! मुझे जब तक मोक्ष की प्राप्ति न होवे तब तक भव-भव में शास्त्रों का पठन-मनन-चिंतन, जिन भगवान के चरणों में

नमन, सज्जनों की संगति, सच्चरित्रवानों के गुणों की कथा, पर दोष कहने में मौन, सब जीवों के साथ प्रिय व हितकर वचन और अपने आत्म स्वरूप की भावना इन सबकी मुझे प्राप्ति होवे।

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनं ।

तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः॥

मुझे जब तक मुक्ति प्राप्त न हो तब तक हे जिनेन्द्र! आपके दोनों चरणकमल मेरे हृदय में विराजमान रहें, मेरा हृदय आपके चरण कमलों में लीन रहे।

एवंविहपडिकमणं भावेण कुणदि जो हु सुद्धमई

सो सव्वदुक्खमोक्खं पावइ अजरामरट्ठाणं ॥

अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं ।

तं खमहु णाणदेव! य मज्झवि दुक्खक्खयं कुणउ ॥

इस प्रकार प्रतिक्रमण को जो शुद्धि बुद्धि का धारक नियम से करता है वह सभी दुःखों से मुक्त हो अजर-अमर स्थान को प्राप्त करता है। हे कैवल्य ज्ञान मय देव! मेरे द्वारा जो भी अक्षर मात्रा पद-अर्थ में हीनाधिक कहा गया हो उसे क्षमा करें और मेरे दुःखों का क्षय करें।

इच्छामि भंते ! समाहिभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयणत्तय सरूव-परमप्पज्झाणलक्खण-समाहिभत्तीए णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं॥

हे भगवन्! मैंने समाधि भक्ति का कायोत्सर्ग किया, तत्संबंधी दोष की मैं आलोचना करता हूँ। मैं रत्नत्रय स्वरूप परमात्मा का ध्यान लक्षण वाली समाधि भक्ति की मैं सदा अर्चना, पूजा, वन्दना और नमस्कार करता हूँ। मेरे दुःखों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, रत्नत्रय की प्राप्ति हो, मेरा सुगति में गमन हो, समाधि मरण हो, मुझे जिनदेव के गुणों की प्राप्ति होवे।

(*) इति श्रीपाक्षिकश्रावकप्रतिक्रमणं शश्वत्सिद्धक्षेत्रे श्री सम्मेद-शिखरे पौष शुक्लैकस्यां बुध वासरे ९ जनवरी २००८ तमे दिनाङ्के वीरनिर्वाणस्य २५३४ तमे संवत्सरे समुल्लिखितम्॥

॥ इति दार्शनिक प्रतिक्रमण ॥

नई छहढाला

रचयिता : मुनि प्रणम्य सागर

मंगलाचरण

तीन लोक में चार हैं, मंगल शरण व श्रेष्ठ।
अर्हत् सिद्ध व साधुगण, धर्म जैन जगज्येष्ठ।१।
तीर्थकर जिनदेव की जिनवाणी को ध्याय।
सार्व धर्म संक्षेप से कहूँ चित्त हुलसाय।२।

प्रथम ढाल

(तर्ज- शान्तिनाथमुख शशि उनहारी...)

चदुगति में हैं जीव अनन्त पंच परावर्तन नहीं अन्त।
तीन लोक में अति घन भरे ज्यों डिबिया काजल को धरे।१।
बादर सूक्ष्म भेद से जीव दो विध एकेन्द्रिय जानीव।
पृथ्वी जल अग्नि अरु वायु तथा वनस्पति थावर गाउ।२।
साधारण प्रत्येक हु दोय तिन निगोद साधारण होय।
साधारण आहार शरीर एक संग जनि मरणन पीर।३।
नित्य इतर दो भेद निगोद सब ही पूर्ण अपूर्ण विबोध।
श्वास अठारह भाग हि जीते लब्धि अपर्याप्तक सुख रीते।४।
जन्म मरण जो होय निरन्तर कहें क्षुद्र भव संज्ञा जिनवर।
छ्यासठ सहस्र इक सौ बत्तीस एकेन्द्रिय के भव जिन दीस।५।
सिद्ध जीव से गुणे अनन्त तन निगोद इक जीव बसन्त।
हीरा दुर्लभ बालु समुद्र त्यों दुर्लभ त्रसता है भद्र।६।
बे ते चउ इन्द्रिय जे जीव विकलेन्द्रिय शंखादि अतीव।
अस्सी साठ और चालीस तिनमें क्षुद्रक भव जिन दीस।७।
तातें पंचेन्द्रिय पर्याय दुर्लभ गुण कृतज्ञ ज्यों आय।
पंचन्द्रिय के हैं चौबीस क्षुद्रक भव कहते जिन ईश।८।
छासठ सहस्र त्रिशत छत्तीस सब अन्तरमुहुरत भव दीस।
रत्नराशि चौपात मिले ज्यों मनुज जनम दुर्लभ पाना त्यों।९।

पुनः मनुज दुर्लभ तरु जले फिर से वे पुद्गल आ मिलें।
 देश, कुलेन्द्रिय विभव निरोग पुनः पुनः दुष्कर संयोग।१०।
 गर्भवास निकसन दुख भूला यौवन मद में रहता फूला।
 रोग बुढ़ापा मरणत रोय फिर भी सुख का बीज न बोया।११।
 धर्म बिना जो जीवन जीव व्यर्थ नेत्र बिन वक्त्र सदीव।
 धर्म पाय विषयन में व्यस्त चन्दन दाह भस्म कर मस्त।१२।
 जस तस विषय विरक्ति होय मरण समाधि सुदुर्लभ जोय।
 इस विध दुर्लभ है संज्ञान बिन विचार पशु मनुज समान।१३।
 कर्म और नोकर्म अखेद द्रव्य परावर्तन द्वय भेद।
 थोड़ा बचा ना कोई द्रव्य भोग न छोड़ा भव्य अभव्य।१४।
 जन्म मृत्यु से रहित जहान क्षेत्र बचा ना तू यूँ जान।
 सभी काल के समय अतीव जना मरा है हर इक जीव।१५।
 प्रतिभव की हर एकें आयु भव परिवर्तन कर दुख पायु।
 उत्कट मध्यम जघन विभाव विधिबंधन का वर्तन पाव।१६।
 ज्यों मदिरा पी और विकार बढ़ता कर्मन का त्यों भार।
 यूँ परिवर्तन हुए अनन्त कारण कहूँ यथा भगवन्त ।१७।

द्वितीय ढाल

(तर्ज- ऐसे मिथ्यादृग ज्ञान चरण ...)

मिथ्यादर्शन अरु ज्ञान चर्ण, संसृति कारण श्रुत जैन वर्ण।
 इनको तजने का जतन होय, सो ही सम्यक् पुरुषार्थ होय।१।
 मिथ्यामत देव कुबुद्धि रोग, दुख अपथ त्याग बिन दुक्ख भोग।
 औषध सेवन से रोग जाय, ताकी चर्चा विधि कही जाय। २।
 जो देव शास्त्र गुरु तीन तत्त्व तिनके स्वरूप का ज्ञान सत्त्व।
 तिनकी श्रद्धा सत तत्त्व सार, सम्यग्दर्शन का सुख अपार।३।
 हैं दोष अठारह रहित देव, गुण छियालीस से युक्त एव।
 तिनको ही नित अरिहन्त मान, सर्वज्ञ हितंकर वही जान।४।
 श्री जिनमुख निर्गत शास्त्र बोध, नययुत ना पूर्वापर विरोध।
 ता ही से वस्तु स्वरूप सिद्ध, संसार बन्ध मुक्ति प्रसिद्ध। ५।
 केवलि श्रुतकेवलि श्रमण सूरि, मति अंजुलि से मुनिनाथ पूरि।
 कलिकाल विषै जिसका प्रवाह, लाए धनि ते दिखलाय राह।६।

आरम्भ परिग्रह रहित नित्य, सद्ब्रह्मज्ञान रत योग सत्य।
 ते सद्गुरु पंचम काल पाय, विषयन विरक्त नत दोष पाय।७।
 ते भावलिंगि मुनि हैं महन्त, आतम ज्ञानी चारित्रवन्त।
 गुरु आगम आज्ञा का प्रबन्ध, समकित जानो मत बनो अन्ध।८।
 धरसेन शिष्य श्रीपुष्पदंत, कृत भूतबली सिद्धान्त ग्रन्थ।
 श्रीकुन्दकुन्द अरु उमास्वामि, मुनि समन्तभद्र पदपूज्य नौमि।९।
 अकलंक आदि श्रीवीरसेन, हैं आर्ष सन्त इन रचित वै।
 जो पढ़ें प्रमाणिक वचन ज्ञान, सो लहैं प्रमाणिक शास्त्रज्ञान।१०।
 सूरज सूरिन के ग्रन्थ पाय, अविरत जुगनू क्यों शास्त्र गाय।
 मुनिवचनों की श्रद्धा जु धार, समकित अठ अंग समेत सार।११।
 अंजन सम भव्य निशंक होय, बिन ज्ञान धरे भी अमर होय।
 निःकांक्ष बनी विष विषय जान, समदृष्टि अनन्तमती बखान।१२।
 आहार देय मुनि-वमन देख, उदायन तीजा अंग लेख
 नहि पच्चीसा तीर्थेश आज, निर्मूढ रेवती का सुकाज।१३।
 उपगूहन सेठ जिनेन्द्र नाम, मुनि वारिषेण थिति करण काम
 विष्णु मुनि हैं वात्सल्य धाम, मुनि वज्र अन्तिमे अंग नाम।१४।
 त्रय मूढ आठ मद बिना होय, समकित अठ अंगन सहित सोय।
 दृगमोहादिक विधसप्त नाश, क्षायिक आदिक जिननाम भास।१५।
 सो समकित भी व्यवहार जान, कारण है निश्चय कार्य मान।
 मुनि पाण्डव पारसनाथ स्वामि, सम्यग्दृष्टि निश्चयी नामि।१६।
 जब श्रमण होय निज ध्यान लीन, तब आत्म रुची प्रकटे प्रवीण।
 परद्रव्य भिन्न निज आत्मज्ञान, सो ही निश्चय अनुभूति ज्ञान।१७।
 निज में थिरता निश्चय चरित्र, तीनों इक संग न भिन्न मित्र।
 इस विधि द्वय विध जो मोक्षमार्ग, क्रम-क्रम तें साधों भव्य जाग।१८।

तृतीय ढाल

(तर्ज- आतम को हित है सुख...)

निश्चय से सब जीव शुद्ध हैं एकेन्द्रिय या सिद्ध
 विधि व्यवहार बताता किस विध संसारी हो सिद्ध।
 योग कषायों के ही कारण आतम के परिणाम।
 तिनको ही गुणथान कहो है चौदह संख्य प्रमाण।१।

ज्यों कोई ज्वरवान पुरुष को सब कुछ कड़वो लागे।
 त्यों मिथ्यादृष्टि जीवन को जिनवर वचन न भावे।
 प्रथम कहो तिनमें मिथ्यात्व पंच भेद उर आनो।
 एकान्तिक विपरीत विनय सह संशयाज्ञान बखानो।२।
 दो नय में एक ही को माने सो एकान्ति कहावे
 केवलि कवलाहार बतावे वह विपरीत रहावे।
 वैनेयिक कह सब देवन को अरु गुरुजन को मानो
 क्या सच्चा क्या झूठा संशय ज्ञान बिना शिव ठानो।३।
 गुणस्थान पहले से जीव चौथो पंचम सातें
 कोई भी इक प्राप्त कर सके भव्य जीव क्रम ना तें।
 जो अनादि मिथ्यादृष्टि हैं चारों गति के प्राणी
 प्रथम लहें उपशम समकित को पंच लब्धिवश ज्ञानी।४।
 सप्त प्रकृति का उपशम जिनको उपशम सम्यग्दृष्टि
 सम्यक् प्रकृति उदय होय यदि वेदक सम्यग्दृष्टि।
 जिनवर भक्ति बढ़ाने वाला केवलि द्वय पद मूल
 सप्त प्रकृति का क्षय कर पावे क्षायिक भव को कूल।५।
 उपशम सम्यग्दृष्टि के यदि आदि कषाय उदयावे
 सासादन दूजो गुणस्थान ज्ञान अज्ञान कहावे।
 अनन्तानुबन्धी कषाय का काज है समकित घाते
 एक समय से छह आवलि पल गिरत समय ही पाते।६।
 मिश्र प्रकृति दूजी कषाय के उदय समय में तीजा
 गुणस्थान चौथा पंचम या छठवें से भी तीजा।
 सादि बना भवि मिथ्यादृष्टि पहले से भी तीजा
 अन्तरमुहुरत काल बाद फिर नीचे या ऊपर जा।७।
 इन तीनों विषैं सब जीव अशुभ उपयोगी
 जघन धरे अविरत सदृष्टि भावत शुभ उपयोगी।
 यह ही जघन पात्र कहलाते जघन हि अन्तर आतम
 शुभ उपयोग बढ़े व्रत से तो मध्यम अन्तर आतम।८।
 सम्यग्दृष्टि को नित होवे धर्म धर्मफल प्रीति
 यह संवेग तथा निर्वेद भव तन भोग विरक्ति।

आत्म साक्षिका में अघ निन्दा गर्हा गुरु से कम्पा
 उपशम भाव क्षमा परिणाम सर्वप्राणि अनुकम्पा।९।
 रत्नत्रयधारी में भक्ति साधर्मी से नेह
 आठ गुणों के पालन से ही सम्यग्दर्शन लेह।
 चौथे से पंचम सप्तम जा आदि तीज आ जावे
 लघु मुहूर्त छासठ तैंतीस सागर काल रहावे।१०।
 बारह व्रत धर त्रस हिंसा तज थावर घात न कीजे
 देशविरति पंचम गुण ठानक संयम रति निज लीजे।
 असंख्यात गुण श्रेणी प्रतिपल विधि निर्जर को पावे
 मध्यम अन्तर आतम सो ही मध्यम पात्र कहावे।११।
 त्रस थावर हिंसा से विरती पंच महाव्रत धारी
 तीव्र चतुर्थ कषाय उदय में हो प्रमाद की बारी।
 सो छठवें गुणथानक मुनिवर उत्तम पात्र बने हैं।
 मन्द कषाय उदय गुण सप्तम रहित प्रमादपने हैं।१२।
 होय प्रवृत्ति भी सप्तम में शुभ उपयोगी होते
 मध्यम अन्तर आतम भी वे ध्यान बिना विधि खोते।
 निज आतम में लीन मुनीश्वर शुद्ध उपयोग लहावें
 उत्कट अन्तर आतम हो के स्वानुभूति रस पावें।१३।
 अप्रमत्त गुण में मुनिवर जब श्रेणी सन्मुख होवें
 सातिशयी वह अधःकरण में निज आतम में खोवें।
 मोहनीय कर्मों का उपशम उपशम श्रेणि कहावे
 जिस विध कर्मों का क्षय होता क्षपक श्रेणि मढ़ जावे।१४।
 होय अपूर्व विशुद्ध भाव जहाँ ठाण अपूर्वकरण है
 अनिवृत्ति परिणाम जहाँ हैं नवमा ठाण चरण है।
 सूक्ष्म लोभ ही शेष बचा ज्यों कौसुंभी पट लाली
 सूक्ष्म साम्परायी दशवें गुण अन्तिम राग प्रणाली।१५।
 होय सभी उपशान्त कषायें सो ग्यारहवाँ ठाणो
 नष्ट हुई यदि सकल कषायें क्षीणमोह वह जानो।
 घाती कर्मों के क्षय से फिर केवलज्ञानी सयोगी।
 तेरहवें में योग नाश से केवली होय अयोगी।१६।

पाँच ह्रस्व अक्षर सम काल चौदहवें में रहते
होंय सिद्ध गुण ठाण अतीत शुद्ध हैं निश्चय नय तें।
स्वाभाविक उन सुख रुचि राखे सो ही भव्य कहावे
यह अपूर्व अवसर है आया रुचि स्वरूप मन लावे।१७।

चौथी ढाल

(तर्ज- जिसने राग द्वेष कामादिक...)

सम्यग्दर्शन होने पर ही सम्यग्ज्ञान कहा जाता
जिसके होने पर आतम में रत्नत्रय ही मन भाता
प्रथम करण अरु चरण द्रव्य से मुख्य चार अनुयोग कहे
सबका क्रम से अध्ययन करता सम्यग्ज्ञानी वही रहे।१।
श्री जिनसेनादिक आचारज आदिपुराणादिक कर्ता
प्रथम यही प्रथमानुयोग है धर्म बढ़े अघ का हर्ता।
लोक अलोक विषय संज्ञान वह करणानुयोग गाता।
यति वृषभ कृत प्रज्ञप्ति में तीन लोक की बहु गाथा।२।
रत्नकरण्डक आदिक ग्रन्थ श्रुत चरणानुयोग सारे
गृहि मुनि की चर्या का वर्णन ज्ञान अवश्य रखो प्यारे।
दीपक सम द्रव्यानुयोग है जीवादिक तत्त्वों का ज्ञान
द्रव्य गुणों अरु पर्यायों का सूत्र ग्रन्थ तत्त्वार्थ महान।३।
नय प्रमाण से पर-मत खण्डन जिनमत मण्डन करने को
देवागम से न्याय ग्रन्थ हैं वस्तु परीक्षा करने को।
भरत सगर आदिक भी इसविध रुचि करते अध्यात्म प्रधान
तन्त्र समाधि इष्ट उपदेश गेही को दें आतम ज्ञान।४।
गृह आरम्भ परिग्रह त्यागी धवल पठन के अधिकारी
समयसार की शुद्धातम रुचि ब्रती जनों को हितकारी।
यह व्यवहार ज्ञान है निश्चय ज्ञानी जो मुनि सद्ब्रह्मानी
अल्पज्ञानि शिवभूति अमोही बन जाते केवलज्ञानी।५।
नही ज्ञान का जिनको उद्भव वह भी शिवपथ का राही
शास्त्र ज्ञान मति में उतरे ना णमोकार जप मन भाई।
हृदय धार चल गुरुवचनों को श्रावक हो या श्रमण रहा
निर्मोही बन बढ़ता जाता सम्यग्ज्ञानी उसे कहा।६।

सप्तव्यसन से रहित नित्य हो जिन भगवन की पूजा हो
 जिनमुनि नमन नेह सहधर्मी पात्र दान मन उपजा हो।
 दया दीन पे श्रुत अभ्यासी सद्-र्शन व्रत रतिधारी
 सो गृहस्थ सम्यग्ज्ञानी अन मोहपाश की बलिहारी।७।
 पंच ज्ञान सम्यक् प्रमाण हैं तीन ज्ञान मिथ्यात्व रहे
 मति श्रुत दोय परोक्ष ज्ञान हैं प्रत्यक्षा व्यवहार कहे।
 अवधिज्ञान मनपर्यय दो को देश प्रत्यक्ष कहे ज्ञानी
 केवलज्ञान सर्व प्रत्यक्षी अतः प्रमाणिक जिनवाणी।८।
 प्रतिपदार्थ जो भी सत् दिखता है अनन्त धर्मो वाला
 कह सकता है सब धर्मों को अनेकान्त का मत वाला।
 नित्य अनित्य अनेक एक या विधि निषेध दो धर्मविरुद्ध
 बना विवक्षा नय की कथनी स्याद्वाद शैली अविरुद्ध।९।
 स्यात् शब्द का अर्थ कथंचित् किसी अपेक्षा से कहना
 स्याद्वाद की कथन रीति की शोभा सप्तभंग गहना।
 वस्तु कथंचित् सत् होती जब आत्मचतुष्टय आपेक्षित
 वही कथंचित् असत् हुई जब अन्य चतुष्टय सापेक्षित।१०।
 क्रम से जो सत् असत् कहे वह, भंग तीसरा उभय स्वरूप
 एक साथ दो कथन असम्भव, चौथा अवक्तव्य का रूप।
 सत् कहने पर भी विरुद्ध द्वय, सदसत् कहे नहीं जाते
 अतः पाँचवें सत् अवाच्य सम, असत् अवाच्य भंग पाते।११।
 क्रम से कहने पर दोनों को, युगपत् कहना नहीं बने
 इसीलिए सदसत् अवाच्य का, सप्तभंग संधान बने।
 केवलज्ञानी वस्तु धर्म सब, आत्म से साक्षात् लखें
 वैसा ही श्रुतज्ञानी जाने, नय से किन्तु परोक्ष लखें।१२।
 अर्थरूप नय वस्तु धर्म इक उसका वाचक शब्द नया
 उसको जाने ज्ञान अंश जो, ज्ञानरूप नय उसे किया।
 द्रव्य और पर्याय नयों से, मूलभेद सिद्धान्त अधीन
 निश्चय अरु व्यवहार दो तथा, अन्य भेद अध्यात्म महीन।१३।
 वचन भेद से भेद अपरिमित नय के जिनवर कहते हैं
 अनुभव में व्यवहार व निश्चय गुणभूमि अनु लहते हैं।

सप्तम से ही ध्यान लीन मुनि शुद्ध नयाश्रित अनुभवते
आतम ज्ञानानन्द स्वभावी उससे पहले बस कहते।१४।
नय प्रमाण से श्रुत अनुसारी वस्तु तत्त्व का ज्ञानी ही
सम्यग्ज्ञानी कहलाता है पी पीकर जिनवाणी ही।
संशय विभ्रम मोह त्याग के चारित को धारण करना
इस बिन समकित खो जाता है सूजी में धागा रखना।१५।

पाँचवी ढाल

(तर्ज- इस विध राज करे नरनायक...)

सकलदेश विध चारित द्वय हैं सम्यग्ज्ञान सुकार्य
राग द्वेष की हानि करन को भवि जन वृत्त सुधार्य।
चरित मोह के नाश बिना ना आतम अनुभव होई
छिलका जौ जब हटे लालिमा घटे शुद्धि तब सोही।१।
बिन व्रत तप कर कर्म निर्जरा हाथी न्हौन समान
फूलों से यदि गिरिवर टूटे तो ना गिह में ध्यान।
तातें सकल चरित चिंतो जो जिनवर लिंग महान
लाख उपाय बनाय भव्य जन ग्रहण करो सुख खान।२।
जीव मार्गणा, योनि, कुलों के भेद जानकर वर्ते
कृत कारित अनुमति से हिंसा ना होवे मन शर्ते।
अघ आरम्भ निवृत्ति भाव प्रथम अहिंसा जानो
यही ब्रह्म शुद्धातम धर्म अन सब भेद बखानो।३।
मृषा वचन तज भस्म नीर भी बिना दिये ना लीजै
मन में ना वनिता का चिंतन ना ही चित्र लखीजे।
जो निर्ग्रन्थ मार्ग के अनुचित पाप बढ़ावन हारे
सो परिग्रह मुनिवर ना राखें व्रत प्राणों से प्यारे।४।
प्रासुक भू जुग भूमि लख के दिवस गमन ईर्या है
चुगली निन्दा वच तज हितकर भाषा समिति प्रिया है।
पर प्रदत्त प्रासुक इच्छा बिन भोजन एषण समिती
लख मार्जन कर उपधि उठावें धरते चौथी समिती।५।
प्रासुक भू मलत्याग पाँचवी पंचेन्द्रिय गति रोकेँ
बे त्रय चार मास इक बार अनशन कर कच लोचें।

बिन स्नान त्रिकाल दिगम्बर दंत पंक्ति ना धोवें
 पत्थर, काठ, भूमि पे निशि में इक करवट से सोवें।६।
 एक वक्त भोजन की बिरियां ठाड़े अंजुलि जीमें
 त्रय संध्या सामायिकमय हो निज तन ममत न कीने।
 संस्तुति, वन्दन तीर्थकर का निज प्रतिक्रमण सुहावें
 प्रत्याख्यान भावि दोषन का मूलगुणों में दिढावें।७।
 अट्टाइस गुण पालन शुद्धि मुक्ति महल सोपानो
 या व्यवहार बिना ना निश्चय आतम सुख क्या पानो।
 रत्नत्रय युत दश धर्मन सों भीनो मुनि ही धर्म
 रौद्र निमित्त क्रोध उपजावें भावें क्षमा स्ववर्म।८।
 ज्ञान बढ़ो तप रूप बढ़ो पै मन मृदु पर गुण चिंतै
 निज दोषन का आलोचन कर आर्जव ही हिय चिंतै।
 तृष्णा लोभ हृदय से धोने वृष संतोष सुधारा
 शक्ति बने ना श्रुतपालन की तो भी न झूठ उचारा।९।
 गमनागमन सभी कारज में जीव दया द्वय संयम
 पर निरपेक्ष तपें तप धर्म त्याग निमित्त असंयम।
 ना कुछ मेरा ना कोई मेरा आकिंचन मन आने
 नारी संग ना रूप लखन की इच्छा ब्रह्म कहाने।१०।
 बारह तप सह उग्र परीषह बारह भावना भावें
 भेदज्ञान दृढआतम लीन समयसार मन लावें।
 निश्चय धर्म ध्यान से भिन्न आतम ज्यों असि म्यान
 यही स्वरूपाचरण कहावे निर्विकल्प निज ध्यान।११।
 शुद्धनयाश्रित आत्मज्योति से प्रथम शुक्ल सद्भ्यान
 दूजे शुक्ल ध्यान से तब ही प्रकटे केवलज्ञान।
 पुण्यफला अरिहन्ता भगवन आयु उदय में विहरें
 तीर्थकर विधि उदय होय तब तीर्थ धर्म कह विचरें।१२।
 काय योग जब सूक्ष्म बने तो तीजा ध्यान सुध्यावें
 योग नाशकर वही केवली जिन अयोगि कहलावें।
 चौदहवें गुण में शीलेश ध्यान चतुर्थ करें हैं
 सकल कर्म का क्षण में क्षय कर सिद्धि वधू को वरे हैं।१३।

धन्य धन्य जे जीव जु पाए आतम सुख की झील
 काल अनन्त रहेंगे यूँ ही ज्ञान चेतना शील।
 कर्म कर्मफल चेतनता में कब तक आत्म रूलोगे
 ज्ञान चेतना अनुभव रुचि बिन कैसे मोक्ष लहोगे।१४।
 काज बने जब सो भवितव्य काललब्धि सो काल
 होय प्रमादी काल प्रतीक्षा करें मूढ की चाल।
 परम पुण्य अरु अतिशय चारित पौरुष मुक्ति हेतू
 भाग्य और पौरुष का मेल कार्यसिद्धि का सेतू। १५।

छठी ढाल

(तर्ज- मुनि सकल प्रवी बड़भागी...)

जो धर ना सके यम भारी सो हो घर में व्रतधारी।
 मधु मांस मद्य नहीं खावे वैराग्य भावना भावे।१।
 गुरु पंचक शरण रहे हैं दर्शन प्रतिमा सो गहे हैं।
 बारह व्रत दृढ चित धारे व्रति श्रावक शल्य निवारे।२।
 कृत कारित अनुमोदन से त्रस घात न मन वच तन से।
 सो थूल अहिंसा व्रत है यमपाल प्रसिद्ध चरित है।३।
 ना मोष विपदि करि भासे धनदेव सा सच ही भासे।
 पर द्रव्य गहे न अदत्ता मन वारिषेण सपवित्ता।४।
 पर नारी झूठी पत्तर चाहे सो मानो कुक्कर।
 यूँ सोच ब्रह्म आराधे ज्यों सेठ सुदर्शन धारे।५।
 धन धान्यादिक मर्यादा पंचम व्रत जय कर यादा।
 परिमाण दिशा से दिग्व्रत दूजा अनर्थदण्डन व्रत।६।
 ना चिंते पर धन नारी अपध्यान दुःश्रुती टारी।
 अघ वणिज न दे उपदेशा भूजल नहीं नाश हु लेशा।७।
 नहीं अस्त्र शस्त्र ले देवें पन अनर्थ न किंचित् सेवें।
 भोजन पानादिक भोगा आसन सीमा उपभोगा।८।
 त्रय योग शुद्धि संध्या में सामायिक आतम भावें।
 पर्वन के दिन उपवासा दूजा शिक्षाव्रत खासा।९।
 अतिथि को देकर दाना व्रत पाले सौख्य निधाना।
 गृह ग्रामादिक परिमाण देशावकाश में माना।१०।

ये बारह व्रत निर्दोषे वह व्रती गुणों को पोषे
 गुणश्रेणी प्रतिपल सारे कर्मन की लडियाँ डारे।११।
 तीनों संध्या समता में नियमित तीजी प्रतिमा में।
 प्रोषध त्रिभेद अनुशक्ति चौथी से देह विरक्ति।१२।
 भोजन सचित्त नहीं भुंजे सो सचित्त विरत मन रंजे।
 निशि भोज दिवा रति त्यागे त्रयविध छठवीं निज पागे।१३।
 सब नारि त्याग निज पेखे सप्तम में ब्रह्मा देखे।
 आरम्भ त्याग अघ दूरा तज संग ममत भी चूरा।१४।
 दशवीं में अनुमति ना दे गृह कर्म विषे शम स्वादे।
 भिक्षाभोजी नीरंगा ग्यारहवें में यति संग।१५।
 कोपीन मात्र जब राखे ऐलक श्रावक सब भाखे।
 यूं क्रमशः दृढता लाओ निज हित करने व्रत भाओ।१६।
 समकित हो देशव्रती हो, संयम बिन ना मुक्ति हो।
 ये गहे असंखों बारा थिरता समाधि के द्वारा।१७।
 आयु क्षय निकट रहावे सल्लेखन व्रत मन लावे।
 जो शक्ति बने मुनिपन की तो लेवे दीक्षा जिन की।१८।
 यदि ना तो मरण समाधि तज उपधि आधि अरु व्याधि।
 इस विध जो स्वर्ग सिधारे पुनि चयकर मुनिव्रत धारे।१९।
 दो या त्रय भव उत्कृष्टे सत आठ जघन बिन कष्टे।
 भवसागर रुल्यो अपारा कस कमर जतन कर यारा।२०।
 कब तक गिह बंध धरोगे फिर कब तुम ममत तजोगे।
 मौका मत तज यह ज्ञानी करुणा धरि कहि गुरुवाणी।२१।

प्रशस्ति

आदिनाथ जिनराज के बैठ जिनालय आज।
 पूर्ण गुड़ी पड़वा हुआ सार्थ ढाल छह काज।१।
 वीर गए निर्वाण की पच्चीस सौ चालीस।
 'मुनि प्रणम्य' रच धन्य हो वीर नवावे सीस।२।